1. बलबन का राजत्व-सिद्धान्त और सुल्तान की प्रतिष्ठा की स्थापना—बलबन दिल्ली सल्तनत का पहला शासक था जिसने सुल्तान के पद और अधिकारों के बारे में विस्तृत रूप से विचार प्रकट किये। प्रो. के. ए. निजामी ने लिखा है कि 'यह सुल्तान के सम्मान में वृद्धि करने तथा अन्य सरदारों के संघर्ष से बचने के लिए आवश्यक था परन्तु इसका एक कारण उसकी हीनता की भावना भी थी उसके कारण वह अपने विचारों को निरन्तर व्यक्त करके अपने सरदारों को यह विश्वास दिलाना चाहता था कि वह किसी हत्यारे के छुरे अथवा जहर के प्याले के कारण सुल्तान नहीं बना है बल्कि ईश्वर की इच्छा के कारण बना है।' उन्होंने लिखा है कि 'मिनहाज और बरनी ने कहीं पर यह नहीं लिखा है कि उसे दासता से मुक्त कर दिया गया था। इस कारण, उसे शासन करने का कानूनी अधिकार ही न था।' इसी कारण, उसने अपने अधिकार को 'ईश्वर प्रदत्त' बनाने का प्रयत्न किया। बलबन के राजत्व-सिद्धान्त की दो मुख्य विशेषताएँ थीं—प्रथम, सुल्तान का पद ईश्वर के द्वारा प्रदान किया हुआ होता है और द्वितीय, सुल्तान का निरंकुश होना आवश्यक है। उसके अनुसार, "सुल्तान पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि (नियाबत-ए-खुदाई) है और उसका स्थान केवल पैगम्बर के पश्चात् है। सुल्तान को कार्य करने की प्रेरणा और शक्ति ईश्वर से प्राप्त होती है। इस कारण जन-साधारण या सरदारों को उसके कार्यों की आलोचना करने का अधिकार नहीं है।" उसने अपने पुत्र बुगराखाँ से कहा था कि सुल्तान का पद निरंकुशता का सजीव प्रतीक है।"[2] उसका विश्वास था कि सुल्तान की विशेष स्थिति और सम्मान ही उसके नागरिकों को उसकी आज्ञा-पालन के लिए बाध्य कर सकते थे। परन्तु बलबन का यह भी कहना था कि "ईश्वर एक व्यक्ति को सुल्तान का पद इसलिए प्रदान करता है कि वह प्रजा के कल्याण के लिए कार्य करे और अपने कर्तव्यों के प्रति सर्वदा सजग रहे।" यही नहीं अपितु बलबन अपने अधिकारियों से भी यह आशा करता था कि वे ईमानदार, न्यायप्रिय और धर्म-परायण हों। उसका विश्वास था कि जिस प्रकार प्रजा सुल्तान के जीवन को आदर्श मानकर उसका अनुकरण करती है, उसी प्रकार अधिकारियों के व्यवहार से भी प्रभावित होती है। इसी कारण, बलबन न केवल सुल्तान अपितु सम्पूर्ण शासन के प्रति भय ही नहीं अपितु सम्मान भी स्थापित करने में सफल हुआ।

अपने इन विचारों को बलबन ने व्यवहार में परिणित किया। अपने वंशानुगत अधिकार की लघुता को समझकर उसने अपने को विद्वान फिरदौसी की रचना 'शाहनामा' के शूरवीर

Scanned with CamScanner

चचेरे भाई शेरखाँ जो 'चालीस' का योग्य सदस्य था और भटिण्डा, भटनेर, समाना, सुनम का सूबेदार था, पर सन्देह करके उसे जहर देकर मरवा दिया। शेरखाँ की मृत्यु से बलबन का सबसे शक्तिशाली और सम्भावित विरोधी सरदार समाप्त हो गया। इस प्रकार बलबन ने सभी महत्त्वपूर्ण तुर्की सरदारों को समाप्त कर दिया और चालीस सरदारों का गुट नष्ट हो गया। उन सरदारों के स्थान पर छोटे सरदारों की पदोन्नति की गयी जो बलबन के प्रति वफादार हो सकते थे और जो कभी भी उसके साथ समानता का दावा नहीं कर सकते थे। 'चालीस सरदारों के गुट' को नष्ट करके बलबन ने सुल्तान की प्रतिष्ठा और आतंक को स्थापित करने में अवश्य सफलता प्राप्त की परन्तु जिस प्रकार उसने उनको नष्ट किया उससे भारत में तुर्की नस्ल का पराभव हो गया। बाद के समय में तुर्क नस्ल ने अपनी शक्ति और योग्यता दोनों को खो दिया। प्रो. के. ए. निजामी ने बलबन को भारत में तुर्क-शक्ति के पतन के लिए दोषी बताया है। उन्होंने लिखा है कि "अपने व्यक्तिगत और पारिवारिक हितों की सुरक्षा करने के लिए उसने तुर्की शासन-वर्ग के हितों को पूर्णतया भुला दिया। उसने तुर्की सरदारों की प्रतिभा को इतनी क्रूरता से नष्ट किया कि जब सिंहासन के लिए खलजी उनके प्रतिद्वन्द्वी बनकर सामने आये तब वे पूर्णतया असहाय और पराजित कर दिये गये। भारत में तुर्की शक्ति के पतन में बलबन के उत्तरदायित्व से इन्कार नहीं किया जा सकता।"[1]

3. सेना का संगठन—मध्ययुग में एक बड़ी और कुशल सेना के अभाव में सुल्तान की शक्ति और प्रतिष्ठा की सुरक्षा सम्भव नहीं थी। मंगोल-आक्रमणों से सुरक्षा तथा आन्तरिक विद्रोहों को दबाने के लिए भी बलबन को सेना का पुनर्गठन करना आवश्यक था। इसके अतिरिक्त बलबन की निरंकुशता का आधार उसकी सेना की शक्ति ही हो सकती थी। इस कारण बलबन ने सेना को विशाल और कुशल बनाने का प्रयत्न किया। बलबन ने अपनी **सेना की संख्या में वृद्धि** की तथा हजारों अनुभवी और वफादार सैनिक-अधिकारियों की नियुक्ति की। उसने सैनिकों के **वेतन में वृद्धि की**। वह उनकी शिक्षा पर बल देता था और स्वयं जाड़ों में प्रत्येक दिन कि एक हजार घुड़सवार और एक हजार पैदल सैनिकों को लेकर शिकार के बहाने रेवाड़ी तक जाता था और रात्रि हो जाने के पश्चात् वापस आता था। उसने अपना सेना-मन्त्री (दीवाने-ए-अर्ज) इमाद-उल-मुल्क को नियुक्त किया जो बहुत ही ईमानदार और परिश्रमी व्यक्ति था। बलबन ने उसे वजीर के आर्थिक नियन्त्रण से भी मुक्त कर दिया जिससे उसे धन की कमी न हो। बलबन की सेना की अच्छी व्यवस्था का बहुत अधिक श्रेय इमाद-उल-मुल्क को था। इसके अतिरिक्त बलबन कभी भी अनावश्यक कार्यवाहियाँ नहीं करता था, प्रत्येक सैनिक-आक्रमण की योजना स्वयं बनाता था और उसे अन्तिम दिन तक गुप्त रखता था। उसके सैनिकों को आज्ञा दी जाती थी कि वह निर्धनों और दुर्बलों को न सतायें।

बलबन ने उन सभी जागीरों की जाँच करायी जो विभिन्न व्यक्तियों को सैनिक-सेवा के बदले में पिछले शासकों द्वारा दी गयी थीं। उनमें से अनेक व्यक्ति ऐसे थे जो जागीरें प्राप्त

Scanned with CamScanner

करके उनके बदले में राज्य की कोई सेवा नहीं कर रहे थे। अनेक वृद्ध पुरुष, बच्चे अथवा विधवा स्त्रियाँ भी ऐसी जागीरों की मालिक थीं। ऐसे सभी व्यक्तियों से जागीरें छीन लेने के आदेश दिये गये। जो व्यक्ति राज्य की सेवा के योग्य थे अथवा राज्य-सेवा कर रहे थे, उनकी जागीरों से आय एकत्र करने का अधिकार सरकारी कर्मचारियों को दिया गया और जागीरदारों को नकद धन देने के आदेश दिये गये। परन्तु बलबन को अपने इन आदेशों में थोड़ा परिवर्तन करना पड़ा। अनेक वृद्ध पुरुष और विधवा स्त्रियाँ सुल्तान के मित्र कोतवाल फखरुद्दीन की शरण में पहुँचीं और सुल्तान से उनकी सिफारिश करने की प्रार्थना की। वृद्ध कोतवाल के कहने से बलबन ने ऐसे असहाय व्यक्तियों को उनकी जागीरें वापस दे देने की आज्ञा दे दी। इस कारण बलबन की यह सुधार-योजना व्यर्थ हो गयी।

इसके अतिरिक्त सेना का केन्द्रीकरण किया गया हो, ऐसा कोई प्रमाण प्राप्त नहीं होता। सैनिकों को वेतन नकद दिया जाता हो, ऐसी भी कोई बात नहीं थी। सैनिकों को वेतन के स्थान पर पहले की भाँति भूमि प्राप्त होती रही। इक्तादारों और सरदारों को अपनी सेना की व्यवस्था करने का स्वयं अधिकार रहा। इस कारण सेना के संगठन में दोष रहे। परन्तु तब भी बलबन के समय में सेना की शक्ति में वृद्धि हुई, इसे सभी स्वीकार करते हैं।

4. शासन और गुप्तचर-विभाग का संगठन—बलबन का शासन अर्ध-सैनिक और अर्ध-असैनिक था। उसके सभी पदाधिकारियों से सैनिक और प्रशासकीय दोनों ही प्रकार की सेवा की आशा की जाती थी। बलबन ने शासन का नियन्त्रण पूर्णतया अपने हाथों में रखा था। उसके समय में अन्य पदाधिकारियों का ही नहीं बल्कि वजीर के पद का भी महत्त्व घट गया था और 'नायब' जैसा कोई अधिकारी न रहा था। बलबन प्रत्येक अधिकारी की नियुक्ति की स्वयं देखभाल करता था। बलबन के शासन की एक विशेषता यह भी थी कि वह केवल उच्च वंश के व्यक्तियों को ही अधिकारियों के पद नियुक्त करता था। निम्न वंश के व्यक्तियों से उसे घृणा थी। अमरोहा में एक भारतीय मुसलमान को एक सामान्य अधिकारी का पद देने से भी वह असन्तुष्ट हुआ था। उसका कहना था : "जब मैं किसी निम्न परिवार के व्यक्ति को देखता हूँ तब मेरे शरीर की शिरा क्रोध से उत्तेजित हो जाती है।" अपने सिंहासन पर बैठने के पश्चात् उसने अपने पदाधिकारियों के वंशों की जाँच करायी। उसने पाया कि उसके कई उच्च अधिकारी ऐसे थे जो हिन्दू से मुसलमान बने थे। उसने ऐसे सभी पदाधिकारियों को उनके पद से हटा दिया। प्रो. हबीबुल्ला ने बलबन की इस शासन-नीति की कटु आलोचना की है। बलबन के समय में मंगोलों द्वारा भारत की उत्तर-पश्चिम सीमा पर अधिकार किये जाने के कारण तुर्कों अथवा विदेशी मुसलमानों का भारत आना सम्भव नहीं रह गया था। इस कारण, शासन में भारतीय मुसलमानों का सहयोग लेना शासन की एक आवश्यकता बन गया था जिसकी पूर्ति बलबन ने नहीं की। इसके अतिरिक्त, अप्रत्यक्ष रूप से बलबन की शान्ति स्थापित करने और संगठन की नीति को प्रभावपूर्ण बनाये जाने के कारण एक मिश्रित हिन्दू-मुस्लिम संस्कृति का विकास हो रहा था। बलबन द्वारा उच्च कुल के व्यक्तियों को ही शासन में स्थान देने के कारण उसमें बाधा आयी। इस कारण उनका कहना है कि 'बलबन का यह कार्य न केवल निरर्थक था अपितु बुद्धिहीनतापूर्ण भी था।' शासन के सम्बन्ध में उसके क्या विचार थे ? यह उसके द्वारा अपने पुत्रों को दी गयी सलाह से पता लगता है। उसने सलाह दी थी कि[1]—

Scanned with CamScanner

1. एक शासक को दुर्बलों को शक्तिशालियों से बचाना चाहिए।

2. शासन न बहुत कठोर होना चाहिए और न बहुत उदार। कर न इतने अधिक होने चाहिए कि जनता असहाय और निर्धन हो जाय और न इतने कम होने चाहिए कि जनता उद्दण्ड हो जाय।

3. शासक का कर्तव्य है कि वह एक ऐसी व्यवस्था स्थापित करे जिससे कृषि-उत्पादन पर्याप्त हो।

4. राज्य की अर्थ-व्यवस्था योजनाबद्ध होनी चाहिए। आय में से आधी आय व्यय करनी चाहिए और आधी आय संकट के लिए सुरक्षित रखनी चाहिए।

5. राज्य के आदेशों का पालन होना चाहिए और उसके निर्णयों में जल्दी-जल्दी परिवर्तन नहीं होना चाहिए।

6. शासक को व्यापारियों को समृद्ध और सन्तुष्ट बनाये रखने के प्रयत्न करने चाहिए।

7. सैनिकों को ठीक समय पर वेतन मिलना चाहिए तथा शासक को ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए जिससे सेना सन्तुष्ट एवं प्रसन्न रहे।

उपर्युक्त सिद्धान्तों पर बलबन ने भी कार्य किया और उसने एक ऐसी शासन-व्यवस्था को स्थापित करने में सफलता पायी जिसमें जन-साधारण न्याय और शान्ति प्राप्त कर सका।

परन्तु **बलबन के शासन की सफलता का एक मुख्य आधार उसका गुप्तचर विभाग था।** बलबन ने अपने पुत्रों, इक्तादारों, सैनिक-अधिकारियों, प्रशासकीय अधिकारियों आदि सभी के साथ अपने गुप्तचर (बरीद) नियुक्त किये थे। प्रत्येक इक्ता (सूबा) और जन-साधारण में भी उसके गुप्तचर रहा करते थे। बलबन स्वयं इनकी नियुक्ति करता था और उन पर पर्याप्त धन व्यय करता था। उनसे आशा की जाती थी कि वे प्रत्येक महत्त्वपूर्ण सूचना को प्रत्येक दिन सुल्तान के पास भेजेंगे। यदि उसमें से कोई अपने कर्तव्य की पूर्ति में असफल हो जाता था तो उसे कठोर दण्ड दिया जाता था। बदायूँ के संवाददाता को जिसने मलिक बकबक के सम्बन्ध में सुल्तान को उचित समाचार नहीं भेजा था, नगर के फाटक पर लटकवा दिया था। गुप्तचर सुल्तान से सीधा सम्पर्क स्थापित करते थे यद्यपि उनमें से कोई भी दरबार में खुले तौर से सुल्तान के निकट नहीं जाता था। इस प्रकार बलबन ने एक अच्छा गुप्तचर-विभाग संगठित किया।

5. विद्रोहों का दमन और शान्ति-व्यवस्था—बलबन की एक मुख्य समस्या हिन्दू विद्रोहियों का दमन था। दोआब, बदायूँ, अमरोहा, कटेहर आदि स्थानों पर ही विद्रोह नहीं होते थे बल्कि दिल्ली का नागरिक जीवन भी असुरक्षित था। विद्रोही और लुटेरे राजमार्गों पर आक्रमण करते थे, व्यापारियों को लूटते थे और लगान-अधिकारियों को पीटकर भगा दिया करते थे। राज्य की शान्ति और सम्मान की सुरक्षा के लिए इन विद्रोहों को समाप्त करना आवश्यक था। सिंहासन पर बैठते ही बलबन ने सर्वप्रथम दिल्ली की सुरक्षा का प्रबन्ध किया जहाँ मेवों (मेवातियों) ने आतंक फैला रखा था। दिल्ली के आसपास के जंगल काट कर साफ कर दिये गये। चारों दिशाओं में चार किलों का निर्माण करके, वहाँ अफगान सैनिकों की नियुक्ति की गयी तथा लुटेरों और विद्रोहियों पर निरन्तर आक्रमण किये गये। एक ही वर्ष में

Scanned with CamScanner

दिल्ली को इन लुटेरों के आतंक से मुक्त कर दिया गया। दूसरे वर्ष बलबन ने दोआब और अवध के विद्रोहों को दबाया। सम्पूर्ण विद्रोही प्रदेश को सैनिक-क्षेत्रों में बाँट दिया गया। मुख्य स्थानों पर सैनिक चौकियाँ बनायी गयीं, जंगल साफ किये गये, विभिन्न स्थानों पर सैनिक टुकड़ियाँ नियुक्त की गयीं और घूम-घूम कर विद्रोहियों का दमन किया गया। इसके पश्चात् सुल्तान कटेहर गया। कटेहर में बलबन ने नृशंसता का व्यवहार किया। गाँव के गाँव जला दिये गये और सभी पुरुषों का वध कर देने के आदेश दिये गये। सुल्तान की आतंक की यह नीति सफल रही और उसने प्रारम्भिक कुछ वर्षों में ही अपने राज्य की सीमाओं के अन्तर्गत शान्ति की स्थापना करने में सफलता प्राप्त की। साथ ही सुल्तान ने जंगलों को साफ करने, सड़कों का निर्माण करने और उनकी सुरक्षा की व्यवस्था करने की नीति को भी अपनाया और वह भी उसकी सफलता का कारण बनी।

Scanned with CamScanner